आपने लिखा

संदर्भ का सत्रहवां अंक मिला। मुझे यह अंक बहुत ही अच्छा लगा। सन्दर्भ के पृष्ठ दो में 'वो स्कूल - वे शिक्षक' विषय देकर अपने अनुभव लिखने को कहा गया है। यह बहुत ही अच्छी शुरुआत है – शिक्षकों के साथ अपनी बात कह पाने की, एक दूसरे की समझ बांटने की। आशा है शिक्षक गण संदर्भ के माध्यम से अपनी कक्षा के अनुभव ज़रूर बांटेंगे।

मुझे 'नारंगी का छिलका' कहानी भी बहुत अच्छी लगी। एक लड़के के मनोभावों को पढ़ने की कोशिश शिक्षक ने की है। वह लड़के के बदले हुए व्यवहार को महसूस करता है, उनके कारणों का विश्लेषण करता है। एक शिक्षक अपने बच्चों के हर व्यवहार का विश्लेषण करे, उसे मन से अनुभव करे – यह हर शिक्षक के लिए ज़रूरी है और वही शिक्षक वास्तव में बच्चों से जुड़ा हो सकता है।

'स्कूल, शिक्षक और मैं' में कैलाश बृजवासी के कक्षा के अनुभव ऐसे लगे जैसे कि वे सिर्फ उन्हीं के अनुभव न होकर हम सब के हैं। वास्तव में जिस शिक्षक का व्यवहार कक्षा में बच्चों के साथ दोस्ताना होता है उसे सभी बच्चे पसंद करते हैं। उनके पढ़ाने के तरीकों को ध्यान से समझते हैं। और यदि हम शिक्षक हैं तो हमें वे बातें अपनी कक्षा में नहीं दोहरानी चाहिए जिन्हें हम अपने बचपन में पसंद नहीं करते थे। जैसे कि हमें अपने समय में तो कक्षा में कड़ा अनुशासन बिल्कुल अच्छा नहीं लगता था और हम चोरी छुपे काफी शैतानियां किया करते थे। पर अब जब हम शिक्षक हैं तो क्यों बच्चों से उसी अनुशासन की आशा रखते हैं जो हमें भी कभी अच्छा नहीं लगता था।

गंगा गुप्ता, शिक्षिका
घंसौर, जिला सिवनी, म.प्र

सदभ के कुछ अंकों के कुछ लेखों में खोजों को ऐतिहासिक जानकारी के साथ आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। पाठ्य पुस्तकों में यह नज़रिया लगभग नहीं ही है, जिससे आम शिक्षक भी विषय वस्तु को मशीनी ढंग से लेता है और वैसे ही प्रक्षेपित भी करता है। उसमें वह दूर दृष्टि पनप ही नहीं पाती जो शिक्षण में गुरुत्व को पैदा करती है। साथ ही खोज से जुड़े बड़े और महान वैज्ञानिकों के जीवन संदर्भ, उनके संघर्षमय जीवन और उनकी खोजों से जुड़ी रोचक जानकारी भी शिक्षण की एकरसता और ठंडेपन को तोड़ने में बड़ी कारगर हो सकती है। अंग्रेज़ी में तो शायद मिले भी पर हिन्दी में ऐसे साहित्य का सर्वथा अभाव है। यदि है भी तो वह आम शिक्षक की जानकारी से कोसों दूर है। 'संदर्भ' को इस विषय पर पहल करनी चाहिए। ऐसी सामग्री भी प्रकाशित की जानी चाहिए, ताकि विज्ञान और अन्य विषयों का लेखन सम्पन्न और समृद्ध हो सके।

मनोहर बिल्लौरे
आधार ताल, जबलपुर, म. प्र.

बहुत दिनों बाद संदर्भ का 15 वां अंक पढ़ने को मिला। वाकई कैरन हैडॉक का लेख 'बच्चों के चित्र क्या बताते हैं हमें' दिल को छू गया, और अनायास ही पत्र लिखने का मूड हो गया।

बहुत ही सहज ढंग से कैरन ने अपनी बात कही है। मगर अफसोस इस बात का है कि हमने बच्चों में छिपी अपार प्रतिभाओं को कभी मौका ही नहीं दिया। बच्चे जब भी कुछ रचनात्मक करने की कोशिश करते हैं हम पहले से ही उन पर तमाम किस्म के नियम-कानून थोप देते है, ऐसा नहीं वैसा करो, ये नही वो करो . . . । इससे उनकी जिज्ञासाओं और प्रतिभाओं का ह्रास होता है। हम उनसे इतनी अपेक्षाएं करने लगते है कि उन्हें पूरा करते-करते ही उनकी समस्त रचनात्मकता खत्म हो जाती है।

कला बच्चो के सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेश, उनकी कल्पना व मनोभावो को अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम है। इससे बच्चों के विभिन्न कौशलों एवं रुचियो का भी पता लगाया जा सकता है।

पिछले दिनों देवास में किए गए एक शिविर के दरम्यिान कुछ ऐसा ही मैंने महसूस किया। मैने देखा बच्चों ने विभिन्न प्रकार के पेड़-पौधों की पत्तियों से (जिन्हें वे एक दिन पूर्व दी गई सूचना अनुसार अपने-अपने घर से लेकर आए थे) बहुत ही सुंदर मोर, चिड़िया, शेर, ऊंट, ढोलक बजाता आदमी, पहाड़, जंगल, हाथी, घर, मछली, दुकान, कछुआ, बिल्ली... आदि कई चीज़ें बनाई।

इसी तरह जब उन्हें अलग-अलग तरह के रंग कटोरियों में घोलकर दिए गए तो उन्होंने स्वयं आपस में रंगों को एक-दूसरे में मिला लिया। रंगों में धागे को डुबाया जाता, फिर उसे कागज़ के एक हिस्से पर रखा जाता। उसके बाद उस पर आधा कागज़ मोड़कर एक हाथ से दबाया जाता और दूसरे हाथ से धागे का दूसरा सिरा तुरंत खींच लिया जाता। जब खोलकर देखते तो कागज़ के दोनों ओर खूबसूरत चित्र दिखाई देते। इस तरह से हर बार एक नई आकृति बनती थी। बच्चो को इतना मजा आ रहा था कि उन्हें अपनी भूख तक का ख्याल नहीं आया।

इसी तरह से उन्होने बेकार पड़े टूथ ब्रश की सहायता से भी रंगो के माध्यम से कई चीज़ें बनाई। कार्ड शीट एवं कोरे कागज पर पत्थर, धूल, पत्तियां, लकड़ी की टहनी, चूड़ियां, शीशियों के ढक्कन, आदि जैसी कई चीज़ों को रखकर रंग मे भीगे टूथब्रश से उसपर आहिस्ता-आहिस्ता स्प्रे किया। जो भी आकृति और डिज़ाईन बनती उसकी खूबसूरती देखते ही बनती थी।

वस्तुतः देखा जाए तो बच्चों की कल्पनात्मक दुनिया बहुत विशाल, खूबसूरत और रोमांचक चीज़ों से भरी पड़ी है। ज़रूरत उन्हें सिर्फ अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भर प्रदान करने की है। एक ऐसे परिवेश की जहां वे खुद से कुछ नया

रचनात्मक करने के लिए अभिप्रेरित हों। अगर हम उनके रोज़मर्रा के क्रियाकलापों का गंभीरतापूर्वक अवलोकन व विश्लेषण करें तो सचमुच में देखकर हैरानी होगी कि किस तरह बच्चे हमेशा किसी-न-किसी उधेड़बुन में लगे रहकर नित नई चीज़ों की रचना करते हैं।

दिनेश कुमार, 4, राधागंज
देवास, म. प्र.

17वां अंक मिला। सी. एन. सुब्रह्मण्यम को पुनश्चः श्लाघा के शब्द मेरी ओर से। बार-बार गलती करके सीखना बेहतर है। त्रुटिकर्ता का आत्म-विश्वास बढ़ता है। भले ही धागा गांठयुक्त हो, मज़बूत तो रहता है। सवालीराम के सवाल दैनिक जीवन से जुड़े और सबके सोचने का दायरा देने वाले हैं। मेरा जवाब है कि आगे भविष्य में इन्हें पुस्तकाकार प्रकाशित करें। 'प्लाज़्मा' पर व्यक्त विचार पाठकों का मानसिक हाजमा बढ़िया बनाते हैं। बृजवासी जी की लेखन शैली अनुभव सिद्ध तथा दिल को छू लेने वाली थी। त्रुटि को स्वीकार करने के बाद खेद सहित संशोधनयुक्त पुनः प्रकाशन पत्रिका के संपादन मंडल की सत्यशीलता का परिचय देता है।

नरोत्तम शर्मा, वरिष्ठ व्याख्याता,
डाइट, बालाघाट, म. प्र.

नया अंक अति रोचक लगा। रक्त कोशिकीय द्रव और लिम्फ बहुत सहजता से समझाया गया, हाथी पांव से ग्रस्त बच्चे का चित्र देख दिल कांप गया। सिरफिरे समुद्री केकड़ों में ज्वारीय लय ने महसूस कराया कि शोध करना कोई हंसी खेल नहीं है।

पेड़ पौधों में श्वसन लेख सबसे अच्छा लगा क्योंकि इसे छात्रों ने बहुत पसंद किया। यह उन्हें समझ में आ गया। चित्र भी सुन्दर थे। कैलाश बृजवासी का लेख पढ़कर ऐसा लगा जैसे ऐसा तो मेरे साथ भी घटा था। 'नारंगी का छिलका' मर्मस्पर्शी कहानी थी। जुगनू की प्रणयलीला ने आश्चर्यजनक जानकारी दी। 'रोज़गार' और 'गलतियां, जुलाहा और धागे की गांठ' अच्छे लगे।

कविता शर्मा, शिक्षिका
हरदा, ज़िला होशंगाबाद, म. प्र.

एक शिकायत है – कि कहने को तो संदर्भ द्वैमासिक पत्रिका है किन्तु प्राप्त होती है तीन माह बाद। तब तक हमारा इंतज़ार और अगले अंक को पढ़ने की उत्सुकता, दोनों चरम सीमा पर पहुंच जाते हैं। अतः समयानुसार प्राप्त हो तो अतिउत्तम रहेगा।

'गलतियां, जुलाहा और धागे की गांठ' बहुत ही उच्च कोटि का लेख था। इस लेख में तो लेखक ने गागर में सागर भर दिया है। उन्होंने आसान भाषा और आसान उदाहरणों के द्वारा अपनी बात कह दी है कि बच्चों की कमज़ोरी को दूर करो – न कि कमज़ोरी का अहसास

मात्र करा कर उन्हें अपमानित किया जाए। 'कम्प्यूटर शतरंज कैसे खेलता है' मुझे अधिक स्पष्ट नहीं हुआ। रोज़गार लेख ऐसा लगा कि मानों कोई पाठ्य पुस्तक निगम की अर्थशास्त्र की किताब का कोई अध्याय हो।

'ऊर्ध्वपातन' सुशील जोशी का पहला लेख था जो कि माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थी की समझ में आ सके। उनके अन्य लेखों को तो दो या तीन बार शिक्षकों को भी पढ़ना पड़ता था। 'पौधों में श्वसन' अच्छा एवं बोधगम्य था। कैलाश वृजवासी का लेख 'स्कूल शिक्षक और मैं' कोई नवीन अनुभव नहीं था क्योंकि हरेक को इस प्रकार के शिक्षकों का अनुभव होता है।

'नारंगी का छिलका' बहुत ही अच्छी कहानी लगी। इस प्रकार की कहानी पढ़वाने के लिए साधुवाद। 'जुगनू की प्रणयलीला' में जुगनू के विषय में जानकारी बहुत पसंद आई। जुगनू की लालटेन का चित्र भी अच्छा लगा।

मीरा शर्मा, शिक्षिका,
हरदा, ज़िला होशंगाबाद

फॉर्म 4 (नियम-8 देखिए)

द्वैमासिक पत्रिका शैक्षिक संदर्भ के स्वामित्व और अन्य तथ्यों के संबंध में जानकारी

प्रकाशन का स्थान : भोपाल
प्रकाशन की अवधि : द्वैमासिक
प्रकाशक का नाम : राजेश खिंदरी
राष्ट्रीयता : भारतीय
पता : एकलव्य, कोठी बाज़ार होशंगाबाद, 461 001
मुद्रक का नाम: राजेश खिंदरी
राष्ट्रीयता : भारतीय
पता : एकलव्य, कोठी बाज़ार होशंगाबाद, 461 001
संपादक का नाम : राजेश खिंदरी
राष्ट्रीयता : भारतीय
पता एकलव्य, कोठी बाज़ार होशंगाबाद, 461 001
उन व्यक्तियों के नाम और पते जिनका इस पत्रिका पर स्वामित्व है : एकलव्य, ई-1/25, अरेरा कॉलोनी, भोपाल 462 016

मैं राजेश खिंदरी यह घोषणा करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

राजेश खिंदरी
(प्रकाशक के हस्ताक्षर)